संरक्षक—गोल्डामेयर

सन् १९२१ की बात है । अमरीका में रहने वाली एक यहूदी युवती अपने कुछ साथियों के साथ, जिनमें उसका पति और बहिन भी थी, 'पाकाहोन्टास' जहाज़ के द्वारा पैलेस्टाइन के लिये रवाना हुई । उन दिनों पैलेस्टाइन एक रेतीला और अधिकांश में उजाड़ प्रदेश था । सन् १९१५ तक वह टर्की के सुल्तानों के अधीन था, पर प्रथम महायुद्ध में हार जाने के कारण वह ब्रिटिश गवर्नमेंट के अधिकार में आ गया, और उसने घोषणा करदी कि वहाँ पर उस देश के पुराने बाशिन्दों—यहूदियों को बसाया जायगा । पैलेस्टाइन किसी समय यहूदी जाति का मूल निवास स्थान था और वहाँ पर शाह सुलैमान जैसे जगत प्रसिद्ध बुद्धिमान सम्राट शासन कर चुके थे । पर इधर कई सौ वर्षों से तुर्कों ने उस पर अधिकार कर लिया था और वह प्रायः उपेक्षित दशा में पड़ा था । देश के भीतरी भागों में कुछ लाख अरब लोग निवास करते थे और कुछ पुराने यहूदी भी इधर-उधर पाये जाते थे । सन् १९०५ से योरोप और अमरीका के कुछ यहूदी भी वहाँ आकर नई बस्तियाँ बसाने लगे थे, जिनका वास्तविक लक्ष्य पैलेस्टाइन में एक "जातीय गृह" स्थापित करना था । इस आन्दोलन का नेता "बेन गुरियाँ" था, जो आराम की ज़िन्दगी को छोड़कर अमरीका से वहाँ आकर बस गया था ।

जब पैलेस्टाइन में अँगरेजों का "मैंडेटरी" शासन स्थापित हो गया तो यहूदी आन्दोलनकारियों को अपनी योजना के सफल होने की सम्भावना जान पड़ने लगी और वे अमरीका तथा योरोप के यहूदियों को वहाँ आकर बसने तथा पूँजी लगा कर कृषि-फार्म तथा अन्य उद्योग-धन्धे स्थापित करने की प्रेरणा देने लगे । उपर्युक्त यहूदी युवती और उसके साथी, इसी प्रेरणा

से प्रभावित होकर अपना घरबार छोड़ इस लम्बी यात्रा के लिये प्रस्तुत हुये थे।

पर संयोगवश वह समुद्री-यात्रा भी बड़ी खतरनाक सिद्ध हुई। किसी कारणवश उस जहाज के कितने ही मल्लाह और इंजीनीयर असन्तुष्ट थे और उन्होंने मार्ग में बार-बार हड़ताल करके जहाज को क्षतिग्रस्त करने की चेष्टा की। इंजिन घर में पानी भर कर तथा आग लगा कर जहाज को डुबाने की कोशिश की गई, पर कप्तान की सावधानी और कड़ाई से जहाज चौदह दिन के बजाय अड़तालीस दिन में किसी तरह इटली पहुँच गया। वहाँ जाने पर पता चला कि ईसाई और मुसलमान तो पैलेस्टाइन जाने वाले जहाज पर यात्रा कर सकते हैं, पर यहूदियों को टिकिट नहीं दिया जाता। यहूदी केवल ब्रिटिश गवर्नमेंट से मंजूरी प्राप्त करके ही उस देश में प्रवेश कर सकते थे। दूसरी बात यह थी कि अरब लोग उनका विरोध कर रहे थे और वे अवसर मिलते ही उन पर आक्रमण करने को तैयार रहते थे।

पर अमरीका से आने वाले इस दल के सदस्य इन सब कठिनाइयों को समझते थे और इसलिये हर तरह के उपाय करके अपने "प्राचीन देश" में जाने को कटिबद्ध थे। जब पैलेस्टाइन का टिकिट न मिला तो वे दूसरे जहाज द्वारा मिश्र चले गये और वहाँ से रेल द्वारा पैलेस्टाइन जा पहुंचे।

इटली से मिश्र जाने वाले जहाज पर एक बड़ी दिलचस्प घटना हुई। जहाज पर अंगरेज सरकार का एक अधिकारी भी था जिसका कार्य यात्रियों के "पासपोर्ट" की जांच करना था। वह जान कर इन युवतियों को हतोत्साहित करने के लिये कहता—'तुम पैलेस्टाइन में क्या काम करके निर्वाह करोगी? वहाँ तो केवल खेती किसानी का ही धन्धा है।" इस तरह वह इनको बार-बार चिढ़ाता। पर २८ वर्ष बाद एक दिन ऐसा आया कि जब वही युवती, जिसका नाम "गोल्डामेयर" था, पैलेस्टाइन की श्रममंत्री नियुक्त की गई, और उक्त अंगरेज अफसर को, जो उस समय भी वहाँ के "ट्रेड एण्ड इण्डस्ट्री डिपार्टमेंट" में नौकरी कर रहा था, उसी की आज्ञानुसार कार्य करना पड़ा।

जन्म और शिक्षा—गोल्डा का जन्म सन् १८९८ में हुआ। उसके माता-पिता रूस के कीव नगर के निवासी थे। पिता लकड़ी की आलमारी बनाने का कार्य करता था, पर बड़ा परिवार होने से उससे बड़ी गरीबी में निर्वाह करना पड़ता था। साथ ही रूस में यहूदियों को क्रान्तिकारी मानकर विशेष रूप से कष्ट दिये जाते थे और चाहे जब उनके मोहल्लों पर आक्रमण करके उनको लूटा-मारा जाता था। इससे परेशान होकर वह भी अन्य हजारों रूसी यहूदियों की तरह अमरीका चला आया और "मिलवायूकी" कस्बे में रह कर रेलवे में बढ़ई की नौकरी करने लगा। गोल्डा की माता खाद्य पदार्थों की एक दुकान करने लगी। पर अब भी उनकी आर्थिक स्थिति असन्तोषजनक थी और परिवार को गरीबी में ही दिन काटने पड़ते थे।

आरम्भ से ही इस प्रकार की गरीबी और सामाजिक अन्याय का अनुभव करने से गोल्डा की मनोवृत्ति में दृढ़ता और प्रतिकार का भाव उत्पन्न हो गया था। सन् १९०३ में रूस के एक कस्बे में रहने वाले यहूदियों पर विधर्मियों ने आक्रमण किया जिसमें ४५ निर्दोष व्यक्ति मारे गये। इस घटना के लिये देश विदेशों के न्याय प्रिय व्यक्तियों ने रूस की निन्दा की, अन्य देश के शासनाध्यक्षों ने विरोध-पत्र भेजे और यहूदियों ने एक दिन नियत करके सर्वत्र अपने धर्म मंदिरों में उपवास किया। यद्यपि उस समय गोल्डा की उम्र केवल ५ वर्ष की थी, पर जब उसने अपनी माता और बहिन को उपवास करते देखा तो वह सब लोगों के रोकने पर भी उपवास में सम्मिलित हो गई। दोपहर के बाद घर वालों ने उसे भूखी देख कर कुछ खा लेने के लिये बहुत समझाया, पर वह अपने निश्चय पर डटी रही और अन्य लोगों ने धर्म मंदिर से वापस आकर भोजन किया तभी उसने भी खाया।

अमरीका जाने पर उसे उस स्वाधीनता का अनुभव हुआ, जिसका रूस में पूर्णतया अभाव था। जिस दिन गोल्डा ने स्कूल में "स्वाधीनता में घोषणा-पत्र" पर हस्ताक्षर किये उस दिन उसकी समझ में आया कि वाशिङ्गटन और जैफरसन ने संसार में क्या काम करके दिखाया था। वहाँ के वातावरण में उसका स्वाधीनता प्रेम, न्याय का पक्ष समर्थन और जातीयता की भावना

दिन पर दिन बढ़ने लगी। उसके हृदय में सार्वजनिक सेवा के क्षेत्र में प्रविष्ट होने की भावना भी बलवती होने लगी। जब उसकी आयु दस वर्ष की ही थी उसने अन्य छोटी लड़कियों को संगठित करके "अमेरिकन यंग सिस्टर्स सोसाएटी" (अमरीका की छोटी बहिनों की संस्था) की स्थापना की। इसका उद्देश्य बहुत अधिक गरीब बच्चों को स्कूल में पढ़ाई जाने वाली किताबें दिलाना था। यद्यपि वे अपने जेब खर्च में से कुछ आने ही बचा पाती थीं, फिर भी लोगों ने उनकी इस भावना की सराहना की। "मिज़वायूको" से प्रकाशित होने वाले स्थानीय समाचार पत्र ने इस कार्य की प्रशंसा में एक लेख प्रकाशित किया कि "यद्यपि यह बहुत अल्प प्रयत्न है, पर इससे यह प्रकट हो गया कि हमारे यहाँ छोटे बच्चों को बिना आवश्यक पुस्तकों के भी स्कूल जाना पड़ता है।" अखबार में इस संस्था की सदस्याओं का चित्र भी प्रकाशित किया गया जिसके नीचे लिखा था। "प्रेसीडेण्ट गोल्डी सबसे ऊपर की पंक्ति में दाहिनी तरफ से चौथे नम्बर पर खड़ी है।"

सेवा और स्वार्थ त्याग की यह आरम्भिक भावना ही आगे चल कर बहुत बड़े रूप में प्रस्फुटित हुई। उसी भावना ने हाईस्कूल तक पढ़ी एक सामान्य बढ़ई की पुत्री को स्वेच्छा से अमरीका का सुविधापूर्ण जीवन त्याग कर पैलेस्टाईन के रेगिस्तानी प्रदेश में जाने को प्रेरित किया और सैकड़ों प्रकार के कष्ट तथा खतरे उठा कर "इसराईल" के नवीन राष्ट्र की स्थापना में महत्वपूर्ण सहयोग देने लायक बना दिया। हमारे देश के बालकों में सार्वजनिक हित की ऐसी भावना प्रायः देखने में नहीं आती। यदि किसी को ऐसी प्रेरणा प्राप्त होती भी है तो वह अधिकतर संकुचित जातीय अथवा साम्प्रदायिक क्षेत्र तक ही सीमित रह जाती है। इसी कारण हमारे यहाँ के सार्वजनिक कार्यकर्ता भी जात-पांत के फन्दे से नहीं निकल पाते और राजनीतिक क्षेत्र में भी वे इसी दूषित मनोवृत्ति से काम लेते रहते हैं। यदि वे सेवा के सच्चे भाव से कार्य करते तो हमारे देश की हालत आज बहुत सन्तोषजनक होती।

जातीय आन्दोलन में—

गोल्डा पढ़ने में हमेशा तेज रही और अपने दर्जे में उसका नम्बर सदा

प्रथम रहा । पर उसके माता-पिता लड़कियों को अधिक पढ़ाना आवश्यक नहीं समझते थे और चाहते थे कि वे घर और दुकान का काम करके परिवार की आमदनी के बढ़ाने मे सहायक हों । उनकी माँ तेज मिजाज की स्त्री थी और लड़कियों को खूब डाटती-डपटती रहती थी । इस कारण सबसे बड़ी लड़की "शाना" वयस्क होते ही घर से अलग होकर एक दूसरे कस्बे में रहने लगी थी । गोल्डा भी जब छोटे स्कूल की पढ़ाई समाप्त कर चुकी तो उसकी माता ने उसे आगे पढ़ाने की अनिच्छा प्रकट की । इस पर वह भी १५ वर्ष की आयु में ही घर से निकल कर अपनी बड़ी बहिन के पास चली गई और वहाँ पर वह हाईस्कूल में शिक्षा प्राप्त करने लगी । साथ ही फुर्सत के समय अपने बहनोई की कपड़ा धोने की दुकान पर इस्तरी करने का काम भी कर लेती थी ।

जिस "डेनवर" नामके कस्बे में इन दिनों गोल्डा पढ़ रही थी, वहाँ पर टी० बी० की चिकित्सा करने वाला एक अस्पताल भी था । उसमें दूर-दूर के व्यक्ति स्वास्थ्य को ठीक करने के लिये आते थे । वे प्राय: शाना के यहाँ आकर चाय और लेमन आदि पीते और इधर-उधर की बातचीत करते रहते थे । वे लोग अधिकांश में पूर्वीय-योरोप के देशों के निवासी थे और उनमें समाजवादी, मार्क्सवादी, जिनोइस्ट (यहूदी-राज्य के समर्थक) आदि विभिन्न विचारों के व्यक्ति पाये जाते थे । वे लोग अपने-अपने सिद्धान्त के समर्थन में प्राय: बड़े जोश के साथ वाद-विवाद किया करते थे ।

१५ वर्ष की आयु की गोल्डा को यह राजनीति विषयक बहस बड़ी रोचक और आकर्षक जान पड़ती थी । वे लोग स्त्रियों को स्वाधीनता, समान अधिकार, वोट देने का अधिकार आदि विषयों पर भी खूब चर्चा करते थे । गोल्डा के अर्द्ध-विकसित मस्तिष्क पर इन बातों का प्रभाव पड़ता रहता था और कुछ समय बाद उसकी स्वतंत्र प्रवृत्ति के कारण अपनी बहिन शाना से भी उसका झगड़ा-सा हो गया । गोल्डा ने आरम्भ में एक धुलाई की दुकान में काम किया और फिर एक कपड़े बेचने की दुकान में काम करने लगी । इन कामों में उसे थोड़ा ही वेतन मिलता था और समय अधिक देना पड़ता था,

तो भी वह स्वाधीनता का उपयोग करके प्रसन्न थी। अधिक लम्बी और स्वस्थ होने से अब वह पूरी युवती जान पड़ती थी और अमरीकन समाज के अनुसार कितने ही विवाहेच्छुक युवकों से उसको मित्रता होने लगी। इन युवकों में से एक मोरिस मेरीसन था, जो यद्यपि गोल्डा की तरह ही निर्धन था पर जिसे पढ़ने का बड़ा शौक था। उसने अपने परिश्रम और लगन द्वारा ही स्वयं को शिक्षित बना लिया था। वह गोल्डा से राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं पर बातें किया करता और विभिन्न विषयों की पुस्तकें लाकर उसे पढ़ने को दिया करता।

गोल्डा और मोरिस की मित्रता घनिष्ठ होती गई, पर इन दोनों की प्रकृति में बड़ा अन्तर था। जब कि गोल्डा खूब बातें करने वाली, मिलने-जुलने वाली और सदा आगे बढ़ने को तैयार रहने वाली थी, वहाँ मोरिस चुपचाप रहने वाला और किसी से विशेष सम्पर्क न रखने वाला था। इसके साथ ही वह सार्वजनिक कार्यों में स्त्रियों का अधिक भाग लेना भी पसन्द नहीं करता था। इसके विपरीत गोल्डा शुरू से ही राजनीति और सामाजिक कार्यों की तरफ रुचि रखने वाली थी और निरन्तर "जिनोइज्म" (यहूदी राष्ट्रवाद) की तरफ खिंचती चली जाती थी। पर इतना अन्तर होते हुये भी मोरिस गोल्डा की सुन्दरता और बुद्धिमत्ता के कारण उस पर हृदय से अनुरक्त हो गया। वह स्वभाव से एक 'प्रेमी' था और जिसे एक बार प्रेम कर लिया उसके साथ हर तरह से निर्वाह करना ही उसे आदर्श जान पड़ता था। गोल्डा भी उसकी विद्या और सादगी तथा सचाई के कारण उसकी तरफ आकर्षित थी। इसलिये यद्यपि उनके मार्ग में अनेक बाधायें आईं, पर अन्त में वे विवाह-सूत्र में बँध ही गये।

जिस समय मोरिस से मित्रता चल ही रही थी, उसी समय गोल्डा की माँ का पत्र आया कि यदि वह उसके पास आना चाहे तो उसके हाईस्कूल में पढ़ने की व्यवस्था करदी जायगी और वह चाहेगी तो उसके बाद नार्मल स्कूल में ट्रेनिङ्ग की परीक्षा भी दे सकेगी। इस पर गोल्डा, जो अब सोलह वर्ष की हो चुकी थी "मिलावायूकी" चली आई।

"यहूदी राज्य" की भावना—

इसी समय योरोप में प्रथम महायुद्ध आरम्भ हो गया और रूस तथा आस्ट्रिया की सरकारें उन देशों में रहने वाले यहूदियों पर अकथनीय अत्याचार करने लगीं। उनकी सेनायें जहाँ कहीं पहुँचती थीं, वहाँ के यहूदियों को या तो कत्ल कर देती थीं या देश निकाला दे देती थीं। इससे समस्त संसार के यहूदियों में एक हलचल मच गई और अमरीका के धनवान यहूदी करोड़ों रु० चन्दा इकट्ठा करके उनकी सुरक्षा की व्यवस्था करने लगे। गोल्डा पर इन घटनाओं का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। उसने पीड़ितों के लिये चन्दा इकट्ठा किया और इस सम्बन्ध में बड़े जोरदार भाषण देकर लोगों को आगे बढ़ने की प्रेरणा देने लगी। इसी समस्या पर विचार करते-करते वह इस निष्कर्ष पर पहुँची कि योरोप के पीड़ित यहूदियों का प्रश्न केवल आर्थिक सहायता और उनके पक्ष में भाषण देने से हल नहीं हो सकता, वरन् उनके लिये एक ऐसे "स्वदेश" का होना आवश्यक है, जहाँ वे किसी भी समय और बिना किसी प्रकार की कानूनी रुकावट के जा सकें। यह निश्चय करके सन् १९१५ में ही, जब वह सत्तरह वर्ष की थी, "पोआले जिओन" नामक संस्था की सदस्या बन गई। यह एक छोटी, अल्प प्रभाववाली संस्था थी, जिसमें अधिकांश "योडिश" भाषा बोलने वाले श्रमजीवी सम्मिलित थे। इन लोगों का निश्चय था कि वे यथसंभव शीघ्र पैलेस्टाइन जाकर वहाँ यहूदी राज्य की स्थापना का प्रयत्न करेंगे।

उस समय अमरीका में 'जिओनिज्म' की प्रचारक एक और बड़ी संस्था भी थी। पर उसमें भाग लेने वाले अधिकांश में बड़े लोग या पूँजीपति थे, जो केवल जातीयता के भाव से ही इस आन्दोलन का समर्थन नहीं करते थे, वरन् जिनका मुख्य उद्देश्य पैलेस्टाइन का औद्योगिक विकास करके स्वयं भी उससे लाभ उठाना था। इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि वर्तमान युग के पूँजीपति धन के अतिरिक्त और किसी चीज या गुण को उससे बढ़कर अधिक महत्व नहीं दे सकते। जिस प्रकार हमारे यहाँ के सेठ साहूकार 'दान-पुण्य' के कार्यों में हजारों, लाखों रुपया लगा देने पर भी मन में उससे अधिक धन पाने की अभि-

लाषा रखते हैं, वही बात अमरीका के कितने ही यहूदी पूंजीपतियों के लिये भी कही जा सकती थी।

पर गोल्डा की भावना इस सम्बन्ध में बहुत शुद्ध और त्याग तथा बलिदान की थी। वह स्वयं बहुत गरीब घर में पैदा हुई थी, रूस में उसने स्वयं यहूदियों की दुर्दशा देखी थी, अमरीका में भी उसने निर्धनता के कष्ट सहन किये थे, इसलिये वह पैलेस्टाइन में "यहूदी-राज्य" का समर्थन गरीब यहूदियों की सुरक्षा और हित की दृष्टि से करती थी। वह पैलेस्टाइन जाकर बसना और उसके निवास के लिये प्रयत्न करना, इसलिये पसन्द नहीं करती थी कि वहाँ उसे कुछ आर्थिक लाभ हो सकेगा, या वह अधिक आराम से रह सकेगी। वरन् उसका उद्देश्य स्पष्टतः स्वयं कष्ट और सब प्रकार की असुविधाएँ सह कर भी अपनी जाति के उद्धार के लिये प्रयत्न करना था। और वास्तव में एक उच्च आत्मा का यही कर्त्तव्य होना भी चाहिये। हम भी अपने देश में आज तिलक, गोखले, गाँधी, मालवीय और चन्द्रशेखर आज़ाद, भगतसिंह, सुभाष बोस आदि की मरने के बाद भी प्रतिष्ठा करते रहते हैं, उनके स्मारक बनाते हैं, जब कि दस बीस लाख का दान देकर मंदिर, धर्मशाला आदि बना देने वाले अथवा किसी अन्य "धर्मकाय" के नाम पर धन देने वाले सेठ साहूकारों के नाम भी कोई नहीं जानता।

पीड़ित यहूदियों की सेवा में अपनी अल्प शक्ति को लगाते हुए गोल्डा ने पैलेस्टाइन जाकर वहाँ "यहूदी-राज्य" की स्थापना के लिये हर प्रकार का प्रयत्न और बलिदान करने का निश्चय कर लिया। पर उसके घर वाले, उसकी बहिन, उसका भावी पति तथा अन्य इष्ट-मित्र इस विचार के पक्ष में न थे, और यही सलाह देते थे कि वह अमरीका में ही रहकर पीड़ित यहूदियों की सेवार्थ उद्योग करती रहे। इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि पैलेस्टाइन का देश उस समय हर प्रकार की असुविधाओं और खतरों से भरा था और अमरीका का एक गरीब आदमी भी वहाँ की अपेक्षा सुख और सुविधाओं का उपभोग करता था। पर इन सब बातों को जानते हुये भी गोल्डा ने जो पैलेस्टाइन में निवास करने का निश्चय किया उसका कारण यही था कि उसके हृदय में

जातीय-प्रेम हिलोरें मार रहा था और वह अपने दुर्दशाग्रस्त भाइयों के लिये कुछ सच्ची सेवा का कार्य करने को व्याकुल थी। यही कारण था कि उस अपरिपक्व आयु में ही उसके भाषण ऐसे हार्दिक भावनायुक्त और जोशीले होते थे कि उसकी गिनती नेताओं में होने लग गई और जातीय सभाओं और कान्फरेंसों में वह प्रतिनिधि के रूप में भाग लेने लगी।

हमारे देश की स्त्रियों की तो क्या बात पुरुषों में भी ऐसी भावना बहुत अल्प परिमाण में दिखाई पड़ती हैं। प्रथम तो यहाँ बहुत कम लोगों का ध्यान व्यक्तिगत स्वार्थ से हट कर जातीय हित की तरफ जाता है, और यदि कोई इस विषय में कभी विचार भी करते हैं तो वे सामान्य चर्चा या जबानी जमा खर्च करके ही अपने कर्त्तव्य की पूर्ति समझ लेते हैं। यही कारण है कि आजकल हमारे अधिकांश आन्दोलन असफल सिद्ध होते हैं और सार्वजनिक संस्थायें कुछ दिन चलकर समाप्त हो जाती हैं। गोल्डा के जीवन-वृतान्त को हम इसलिये इतना महत्त्व देते हैं ताकि हमारे भाई बहिन उससे शिक्षा ग्रहण करें कि जब एक साधन रहित और बहुत सामान्य पढ़ी-लिखी लड़की ने, जातीय-हित के उद्देश्य से इतना त्याग किया और दृढ़तापूर्वक संलग्न रह कर समस्त जीवन उसी के लिये निछावर कर दिया तो हम बहुत कुछ साधन और सहायक होने पर भी कोई महत्त्व की जातीय-सेवा क्यों नहीं कर सकते ?

यहूदी समाचारपत्र का प्रकाशन—

सन् १६२० में 'पोआले जिओन' की तरफ से "योडिश" भाषा में एक दैनिक पत्र प्रकाशित करने का निश्चय किया गया, जिसका नाम "डि जीट" (दी टाइम्स) था। एक सामान्य साधनों वाली संस्था के लिये यह बहुत बड़ा और खतरनाक कार्य था, क्योंकि दैनिक पत्र में हजारों, लाखों का घाटा हो जाना बिल्कुल साधारण बात है। इसलिये पत्र का संचालन करने के लिये एक कम्पनी बनाई गई और गोल्डा को उसके शेयर बेचने के लिये भेजा गया। इस कार्य के लिये प्रति सप्ताह १५ डालर और मार्गव्यय देने का निश्चय किया गया। वह पत्र की आर्थिक स्थिति को अच्छी तरह समझती थी, इसलिये कई महीने यात्रा करने पर भी कभी होटल में नहीं

ठहरी और अपने खाने का व्यय भी यथाशक्ति कम ही करती थी। यहाँ तक कि अगर वह आइस क्रीम खाती तो उसका दाम भोजन खर्च में शामिल नहीं करती थी। उसका कहना था कि "संस्था से मैं आइसक्रीम नहीं माँग सकती।"

इतनी मितव्ययिता करते हुये भी गोल्डा परिश्रम और कार्य में किसी तरह की कसर नहीं रखती थी। जो लोग इस अखबार की निर्बल आर्थिक स्थिति के कारण उसके चल सकने में सन्देह प्रकट करते थे उनको वह "जातीय हित" के नाम पर डाँट देती थी और लोगों को ऐसे हार्दिक विश्वास के साथ समझाती थी, कि वे पत्र की सहायतार्थ तैयार हो जाते थे। एक छोटे शहर में एक जूता बनाने वाला उसकी बातों से ऐसा प्रभावित हुआ कि उसने अपने परिवार को रूस से बुलाने के लिये जो रुपया जमा किया था, वह सब अखबार के शेयर खरीदने में लगा दिया। पर जैसी संभावना थी, तमाम पूँजी के खत्म हो जाने पर बीस महीने बाद अखबार बन्द हो गया। चालीस वर्ष बाद जब वह राष्ट्र संघ में इसराइल की प्रतिनिधि थी, इस पर गोल्डा ने कुछ मुस्कराते हुये कहा—"मुझे अब भी उसके रुपये के डूब जाने का ख्याल आता रहता है"। पर सन् १९२० में उसके मनमें इस प्रकार की भावनायें नहीं उठती थीं।

सबसे कठिन समस्या गोल्डा के पति मोरिस की थी। प्रेम के वशीभूत होकर उसने गोल्डा की सब बातें स्वीकार करके विवाह कर लिया था। पर उसके मनमें यही ख्याल था कि जैसे-जैसे अनुभव होता जायगा और पैलेस्टाइन की कठिनाइयों का पता लगेगा तो वह वहाँ जाने का विचार छोड़ देगी। पर चूँकि गोल्डा का निर्णय किसी बाहरी लाभ या स्वार्थ के कारण न था, वरन् वह उसको आन्तरिक जातीय भावना और परोपकार की वृत्ति से उत्पन्न हुआ था, इसलिये जैसे-जैसे कठिनाइयों और विरोध की बात सामने आने लगी वह और भी दृढ़ होती गई।

सन् १९२१ में पैलेस्टाइन से अरब लोगों के दंगे के समाचार आने लगे। अब रहन-सहन के कष्टों के साथ ही प्राणों का खतरा भी उत्पन्न हो गया। उस

अवसर पर उसकी बड़ी बहिन के पति "साम" ने बड़े आग्रहपूर्वक उसको खतरे से बचकर रहने को कहा तो गोल्डा ने उत्तर दिया—"तब तो मैं वहाँ अवश्य ही जाऊँगी।"

पैलेस्टाइन में आरंभिक जीवन—

सन् १९२३ में जब गोल्डा पैलेस्टाइन में पहुँची तो वहाँ की हालत वास्तव में बड़ी गिरी हुई और कठिन थी। उस समय तक वहाँ केवल कुछ लाख ही यहूदी थे, जिनमें से कुछ तो वहाँ के प्राचीन निवासी थे और कुछ योरोपियन देशों से अत्याचारी शासकों के दमन के कारण प्राण बचाने को आ गये थे। ऐसे लोगों की तादाद, जो "यहूदी-राज्य" का आदर्श और उद्देश्य लेकर आये थे कुछ हजार ही थी। इनमें सबके नेता "बेन गुरियाँ" थे जो १९०५ में ही एक यहूदी उपनिवेश बसाने के उद्देश्य से पैलेस्टाइन में पहुंचे थे, और वहाँ अपने साथियों के द्वारा कितने ही "सहकारी कृषि फार्मों" की स्थापना और संगठन करके विभिन्न देशों का दौरा करके होनहार नवयुवकों को पैलेस्टाइन में आकर बसने की प्रेरणा देते रहते थे। सन् १९१५ में टर्की की सरकार ने उनको "यहूदी-राज्य" के लिये षड्यंत्र करने के अपराध में देशनिकाले का दण्ड दिया। तब वे अमरीका में भ्रमण करके वहाँ अपने "मिशन" का प्रचार करने लगे। उसी समय गोल्डा की भेंट उनसे हुई थी, और उन्हीं की बातों से प्रभावित होकर उसका पैलेस्टाइन में जाकर बसने का निश्चय अटल-अचल हो गया था। वह उसी समय पैलेस्टाइन चली जाती पर युद्ध के कारण उन दिनों वहां जाकर कार्य कर सकना असम्भव था, इसलिये महायुद्ध समाप्त होने के पश्चात् ही का निश्चय करना पड़ा।

ऐसे विरोधी धर्मवालों द्वारा शासित और सैकड़ों वर्षों से उजाड़ पड़े हुये देश में जाकर बसना और उसको रहने लायक बनाना सहज न था। सन् १९०९ में कुछ धनवान यहूदियों द्वारा "एमेक" की घाटी की बहुत सी भूमि खरीद कर उसमें "सहकारी फार्म" स्थापित करने की योजना बनाई गई। यह जमीन जगह-जगह पानी और कीचड़ से भरी थी और इस कारण वहाँ मलेरिया का बड़ा प्रकोप रहता था। नये बसने वालों का बड़ा परिश्रम करके सर्व-प्रथम

वहाँ रुके हुये पानी को निकाल कर जमीन को खेती के लायक सूखी बनाना पड़ा। उसके पश्चात् वहाँ पर धीरे-धीरे सड़कें, मकान और बस्तियाँ बसाई गईं। यह कार्य कितना कठिन था और उन सबसे पहले आने वालों ने उसको किस प्रकार स्वार्थ त्याग के भाव से किया, इस सम्बन्ध में गोल्डा के पहुँचने के कुछ ही पहले 'जेवनेली" नामके प्रमुख कार्यकर्ता ने एक कान्फरेंस में बतलाया था—

"इस समय इस प्रदेश जो चार हजार यहूदी कार्यकर्ता निर्माण कार्यों में व्यस्त हैं वे ही इस देश की कायापलट करेंगे। हम सब मध्यम श्रेणी के घरों के युवक हैं, जिनको शारीरिक श्रम के कार्यों से कभी काम नहीं पड़ा। पर अब वे पैलेस्टाइन आकर सब प्रकार के कामों के करने में अभ्यस्त बन रहे हैं। चाहे सड़कों और "हाईवे" बनाना हो, चाहे मैदानों को हल से जोतना हो, चाहे पत्थरों को हटाना हो, चाहे पहाड़ों में खेती करना हो—हर कार्य में हमने इस बात का प्रमाण दे दिया है कि अभी हमारी जाति का शक्ति-स्रोत सूख नहीं गया है। हमको ही "यहूदी-जगत" के सम्मुख यह घोषणा करनी है कि हम पोलैण्ड और रूमानिया के यहूदियों को बचा कर "इसराईल" राष्ट्र का निवासी बनायेंगे।"

गोल्डा भी पैलेस्टाइन पहुँच कर इन्हीं उत्साही देशभक्तों के दल में शामिल हो गई। यद्यपि कितने ही पुराने विचारों के व्यक्ति स्त्रियों का घरेलू कार्यों, भोजन बनाने और सन्तानपालन तक ही सीमित रखना चाहते थे, पर गोल्डा और उसके जैसे विचारों की अन्य स्त्रियों ने इसको स्पष्ट रूप से अस्वीकार किया और कहा कि हम भी राष्ट्र-निर्माण के लिये वे सब काम करेंगी जिनको पुरुष कर रहे हैं। इसलिये नाजुक युवतियों ने स्वेच्छा से चट्टानों को तोड़ने और सड़कें बनाने के कार्य में भाग लेना आरम्भ किया। यह सच है कि भारी पत्थरों के उठाने अथवा कुदाल चलाने के कार्यों में वे पुरुषों की समानता नहीं कर सकती थीं, फिर भी उन्होंने किसी प्रकार के परिश्रम से हार नहीं मानी। जर्मनी में रहने वाली एक सुन्दर लड़की, जो एक युनीवर्सिटी में पढ़ रही थी, पैलेस्टाइन आकर दूसरे ही दिन से एक कृषि फार्म पर काम करने लगी।

वहाँ की तेज धूप में बारह घण्टे काम करने और भोजन में केवल उबले हुये सेम या मटर आदि खाने से उसे पेचिस का शिकायत हो गई। जब उसने व्यवस्थापिका से दलिया देने की प्रार्थना की तो उसने उत्तर दिया कि "हमारे यहाँ रोगियों के लिये कोई व्यवस्था नहीं है।" फिर भी वह अपने निश्चय पर डटी रही और आगे चलकर "इसराईल" की एक प्रमुख कार्यकर्ता बन गई।

सहकारी कृषि-फार्म का रहन सहन

गोल्डा को भी आरम्भ में काफी कठिनाइयाँ सहन करनी पड़ीं। यद्यपि अब कृषि फार्म में खाने-पीने की सामग्री की उचित व्यवस्था हो गई थी, फिर भी सब लोगों को पूर्णरूप से परिश्रम करके ही काम चलाना पड़ता था। आरम्भ में लोगों का ख्याल था कि गोल्डा को अमरीकन ढङ्ग से आराम के साथ रहने की आदत है और वह कृषि फार्म के कार्य को न कर सकेगी। पर वहाँ पर जब उसे बादाम तोड़ने का काम दिया गया तो उसने पूरी सफलता से पूरा कर दिखाया। यद्यपि खड़े-खड़े उसकी पीठ दर्द करने लगती थी और हाथ पीले पड़ जाते थे, पर वह कभी काम से पीछे नहीं हटती थी। फिर भी कई महीने की परीक्षा के पश्चात् जब गोल्डा और उसके पति को सहकारी कृषि-संस्था का सदस्य बनाने का प्रस्ताव उपस्थित किया गया तो कुछ लोगों ने उसके सम्बन्ध में एतराज किया। उनका कहना था कि यद्यपि वह एक परिश्रमी और सहिष्णु कार्यकर्ता है, पर अभी तक उसमें अमरीकनों के कितने ही शौक शेष रह गये हैं। वह काम करने के बाद कितनी ही बार स्नान को रेशमी मोजे पहिन लेती है, कपड़ों में शिकन पड़ जाती है तो वह उन पर अवश्य ही इस्तरी करती है, सामूहिक रसोई घर में काम करते समय वह मेज पर आयल क्लाथ बिछाने को कहती है, अगर खाने वाले उठते समय अपनी खाने की मेजों को साफ नहीं कर जाते तो वह शोर मचाती है। ये सब बड़े लोगों के "शौक" हैं और आगे चल कर इनके कारण ऐसी और बातें होने की सम्भावना है।

सफाई की प्रवृत्ति के विरुद्ध ऐसे आक्षेप सुनकर गोल्डा को बड़ा

आश्चर्य हुआ ! उसने आक्षेपकर्ताओं को उत्तर दिया कि "आप गायों तथा अन्य पशुओं की सफाई पर तो बड़ा जोर देते हैं, तो क्या मनुष्यों को उतना भी स्वच्छ नहीं रखना चाहते ?" उसने इस विषय में किसी की बात पर ध्यान न दिया और जब उसे 'फार्म' के पाँच पशुओं की देखभाल का काम सौंपा गया और उस समय वहाँ कोई छूत की बीमारी फैली तो उसने स्नान की 'टब' को "आलकोहल" से धोकर साफ कर लिया। लोगों ने मजाक में उनका नाम ही गोल्डा के "ब्राण्डी बेबीज" (ब्रांडी वाले बच्चे) रख दिया।

गोल्डा ने अपने सब कार्यों को इतनी योग्यता और लगन के साथ पूरा किया कि छः महीने के ही उसको "मुर्गी-पालन" की शिक्षा ग्रहण करने भेज दिया गया। वहाँ से लौटकर उसने फार्म में यह कार्य आरम्भ कर दिया और उसमें पूरी तरह सफलता प्राप्त कर दिखाई। एक वर्ष बाद वह 'कृषिफार्म' की तरफ से पैलेस्टाइन की "केन्द्रीय यहूदी श्रमजीवियों की यूनियन" में प्रतिनिधि बनाकर भेजी गई। वह अन्य प्रकार से भी आवश्यकता पड़ने पर फार्म निवासी स्त्री-पुरुषों की सहायता करती रहती थी और एक प्रकार से सर्वप्रिय बन गई थी।

पर गोल्डा के पति मोरिस को कृषि फार्म का जीवन कुछ भी पसन्द नहीं आया। पहली बात तो यह थी कि उसका शरीर ऐसा न था कि वहाँ के कमरतोड़ कार्य को कर सके। इसलिये शीघ्र ही उसे मलेरिया हो गया, जिससे उसकी चिन्ता और भी बढ़ गई। उसकी हड्डी भी टूट गई, जो बिना आपरेशन के ठीक नहीं हो सकती थी। इन सबसे अधिक खराब बात उसे यह जान पड़ती थी कि यहाँ पर "प्राइवेसी" (एकान्त) और सामाजिकता का सर्वथा अभाव था। अन्य लोग तो इन बातों को "आदर्श" मानते थे पर मोरिस की दृष्टि में यह देहातीपन अथवा मूढ़ता ही थी।

कुछ समय बाद गोल्डा के मन में भी परिवर्तन की भावना आने लगी। यद्यपि सहकारी कृषिफार्म में स्थान पाना बड़ा सौभाग्य माना जाता था और जो एक बार वहाँ पहुँच जाता था वह उसे छोड़ने का कभी विचार नहीं

करता था, क्योंकि वहाँ जीवन निर्वाह की बहुत स्थायी व्यवस्था थी। पर गोल्डा केवल खाने पहिनने की व्यवस्था के लिये पैलेस्टाइन नहीं आई थी। वह उस देश के राष्ट्रीय जीवन में कुछ महत्वपूर्ण काम करना चाहती थी। इसलिये जब उसने अपने पति को 'फार्म' के जीवन से असन्तुष्ट देखा और यह भी अनुभव किया कि इसके कारण उन दोनों में मनोमालिन्य उत्पन्न हो रहा है, तो उसने उस स्थान को बदल देना ही उचित समझा।

सार्वजनिक जीवन में प्रवेश—

कुछ समय तक गोल्डा "तेल अबीव" में रही और "पबलिक वर्क डिपार्टमेंट" में कैशियर का कार्य करती रही। पर इसके पश्चात् गर्भवती हो जाने से उसने वह कार्य छोड़ दिया और जरूसलम में जाकर रहने लगी। गृहस्थी का भार पड़ जाने से वह अपना अधिकांश ध्यान बच्चों की तरफ लगाने लगी। उस समय उसकी आमदनी और भी घट गई। उधर पति को भी कोई ठीक नौकरी न मिल सकी। इस कारण सन् १९२४ से १९२८ तक चार-पाँच साल का समय उसे बड़ी कठिनाइयों में काटना पड़ा। इस सम्बन्ध में उसके जीवन चरित्र में कहा गया है—

"अपने बड़े बच्चे को एक नर्सरी स्कूल में दाखिल करने के लिये, उसने वहाँ के सब बच्चों के कपड़े धोने का भार अपने ऊपर लिया। पर वहाँ पर अमरीका की तरह धुलाई करने की मशीन न थी और गोल्डा का सब काम अपने हाथों से ही करना पड़ता था। वह एक के बाद दूसरा डोल पानी गर्म भरती जाती और कपड़ों को एक लकड़ी के तख्ते पर पीट-पीट कर साफ करती। छः महीने तक "धोबिन" का काम करने के पश्चात् उसे एक अन्य प्राइवेट स्कूल में अंगरेजी पढ़ाने की नौकरी मिल गई। उसे अपने बच्चे को पैदल या गोदी में लेकर जाना पड़ता था, क्योंकि बच्चों की गाड़ी खरीदने लायक पैसा उसके पास न था। बच्चे के लिये दूध का प्रबन्ध करने में भी कठिनाई पड़ती थी और स्वयं तो प्रायः सूखी रोटी पर ही गुजारा करना पड़ता था। यद्यपि गोल्डा के माता-पिता भी गरीब थे और उसे अपना जीवन अभावग्रस्त स्थिति में ही व्यतीत करना पड़ा था, पर यहाँ जरूसलम में उसे बच्चों के पालने में उससे भी

अधिक कठिनाई सहन करनी पड़ रही थी। उसके किसी पड़ोसी ने दूध देने वाले से कह दिया कि मोरिस से दूध का रुपया वसूल कर सकना कठिन होगा, तो गोल्डा का दूध मिलना भी बंद हो गया जो मिलता वह भी बड़ी कठिनाई से।

उसके ऊपर थोड़ा-थोड़ा करके काफी कर्ज हो जाता था। यद्यपि वह बड़ी सावधानी और मितव्ययिता से पैसा बचाती रहती तो भी महीना के अंत होने पर मकान का किराया और खाद्य सामग्री वाले का बिल चुकाने के लिये कमी पड़ ही जाती थी। उस समय गोल्डा ने अपने सम्बन्धियों और मित्रों को जो पत्र लिखे थे उनसे विदित होता है कि दुकानदार ने उसे रोटी और "मार्गे-रीन' (नकली मक्खन) उधार देने से इनकार कर दिया था क्योंकि उसे संदेह था कि उसका पति मोरिस दाम चुका सकेगा या नहीं? एक पत्र में उसकी बड़ी बहिन शाना ने लिखा था कि जब उसके पास पार्सल का किराया देने को पैसे आ जायंगे तो वह उसको फलों तथा सब्जी का एक बक्स भेजेगी। इसके अतिरिक्त उन पत्रों में बच्चों को बुखार, खाँसी तथा बीमारियाँ होने का भी जिक्र है।

पर गोल्डा ऐसी कठिनाइयों से घबड़ाने वाली स्त्री न थी। वह इन सबका मुकाबला अपनी आन्तरिक शक्ति तथा योग्यता से अच्छी तरह कर लेती थी। वह एक सुयोग्य गृहिणी और भोजन बनाने में चतुर थी। इस गरीबी की दशा में भी उसके सफाई में अन्तर नहीं आया था। अब भी उसकी गन्दी या असावधानी से धोई हुई रकाबियाँ, टेबिल पर बेढंगे तौर से रखी हुई चीजें, खराब तरह से इस्तरी किया ब्लाउज बहुत नापसन्द था। पर इन सब बातों से बढ़कर शिकायत उसे इस बात की थी कि घर के इस जंजाल ने उसका इतना अधिक फँसा लिया है कि सार्वजनिक जीवन से उसका पूर्णतया सम्बन्ध विच्छेद हो गया है।

गृहस्थी का संचालन या सार्वजनिक सेवा—

इस प्रकार अपने पति के अनुरोध पर उसने सब प्रकार के सार्वजनिक कार्य को छोड़कर अपना पूरा समय गृहस्थी में लगा दिया। इस बीच में उसके

एक पुत्र और एक पुत्री भी हो गये । मोरिस का ख्याल था कि इस प्रकार माता बनजाने और गृहस्थी का भार ऊपर आ पड़ने पर गोल्डा सार्वजनिक जीवन-से पृथक हो जायगी । पर उसकी यह आशा पूर्ण न हो सकी । न तो सन्तान-पालन और न गरीबी में घर की व्यवस्था के लिये रात-दिन परिश्रम करने से गोल्डा की मनोवृत्ति में कोई परिवर्तन हुआ । इसके सिवाय घर की आर्थिक दशा को देखते हुये भी यह आवश्यक था कि वह कोई ठिकाने का कार्य करे । इसलिये मोरिस की इच्छानुसार अपने वैवाहिक कर्त्तव्यों का ध्यान करके उसने चार वर्ष घर के भीतर व्यतीत किये और इस अनुभव के आधार पर वह इसी निष्कर्ष पर पहुँची कि उसे "यहूदी राष्ट्र" के निर्माण की दृष्टि से कोई उपयोगी काम अवश्य करते रहना चाहिये ।

जब उसके साथियों को पता चला कि गोल्डा पुनः सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने को प्रस्तुत है तो वे बहुत प्रसन्न हुये और शीघ्र ही उसे "स्त्रियों की श्रमजीवी सहायक समिति" की मंत्री बना दिया गया । इस कार्य के लिये उसे प्रायः दौरे पर रहना पड़ता था और घर तथा बच्चों के देखभाल की कठिन समस्या उपस्थित होती थी । गोल्डा को अपने बच्चों से काफी प्रेम था और दूर रहने पर उसे उनकी चिन्ता लगी रहती थी, पर साथ ही वह अपने जीवन उद्देश्य—जातीय उत्थान की भी उपेक्षा नहीं कर सकती थी । यह एक हृदयद्रावक समस्या थी और इसका वर्णन करते हुए उसने एक बार लिखा था—

"जो माता काम पर बाहर जाती है उसका आन्तरिक संघर्ष और नैराश्य इतना अधिक होता है कि उसका दूसरा उदाहरण ढूँढ़ सकना कठिन है । ऐसी स्त्रियों में से एक श्रेणी तो उनकी होती है जो केवल आर्थिक कारणों से काम पर जाती हैं । अगर वे ऐसा न करें तो अपने बच्चों को भोजन भी न दे सकें । इसलिये उनको तथा बच्चों को इस इस बात का सन्तोष रहता है कि वह घर की आवश्यकता पूर्ति के लिये ही काम पर जाती है । पर दूसरी श्रेणी उन स्त्रियों की भी होती है जो स्वभाव से ही कुछ और कार्य भी करना चाहती हैं, जो अपने को विशाल सामाजिक जीवन से अलग नहीं कर सकतीं . वे अपने

कार्य क्षेत्रों को घर के भीतर रह कर ही संकीर्ण नहीं बना सकतीं। ऐसी स्त्रियों को अवश्य ही बेचैनी और अशान्ति में रहना पड़ता है।"

यहाँ यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि गृहस्थी के संचालन तथा सार्वजनिक सेवा के कार्यों में जब विरोध पैदा हो जाय तो स्त्री क्या करे? भारतीय स्त्रियां अभी तक इस सम्बन्ध में एक ही उपदेश सुनती आई हैं कि स्त्री का एकमात्र कर्तव्य पति, पुत्र और घर की रक्षा, देखभाल करना है। किसी जमाने में—जबकि स्मृतियाँ और पुराण लिखे गये थे, अर्थात् डेढ़, दो हजार वर्ष पहले—यह बात ठीक मानी जा सकती थी। उस समय के कृषि-प्रधान समाज की आर्थिक व्यवस्था इसके अनुकूल थी। पर वर्तमान समय के उद्योग-धन्धों का प्रधानता वाले युग में हालत बहुत कुछ बदल गई है। अब सुयोग्य महिलाओं का अपनी समस्त प्रतिभा और योग्यता केवल घर के भीतर की व्यवस्था और सन्तान पालन में ही लगाते रहना उपयुक्त नहीं माना जा सकता विदेशों में तो यह साधारण बात हो गई है कि पत्नी भी किसी रोजगार या नौकरी द्वारा उतनी ही आमदनी कर लेती है जितनी कि पति करता है। हमारे देश में भी जब कोई व्यक्ति किसी कारणवश आर्थिक संकट में पड़ जाता है, तो उसकी पत्नी शिक्षक, नर्स अथवा अपने अनुकूल ऐसी ही कोई नौकरी करके घर का काम चलाने लग जाती है। ऐसी अवस्था में यदि बच्चे छोटे हों तो उनको थोड़ी-बहुत असुविधा सहन करनी पड़ती है, पर आमदनी के अभाव में यदि उनको भूखा-प्यासा रहना पड़े तो उस दयनीय दशा से यह दूसरी हालत ठीक ही मानी जायगी।

गोल्डा ने इन सब बातों पर विचार करके यही निष्कर्ष निकाला है कि देश और समाज के प्रति उत्तरदायित्व का पालन करने के लिये यदि गृहस्थी का भार कुछ अंशों में छोड़ना पड़े तो वैसा करना उचित ही है। इसमें भी माता को सदैव मानसिक चिन्ता बनी रहती है, और उसके अन्तरंग में सदा एक संघर्ष होता रहता है, पर कर्त्तव्य पालन की दृष्टि से उसे सहन करना ही पड़ता है।

गोल्डा ने उस समय अपने मोह को नियन्त्रण में लाकर सार्वजनिक

जीवन में भाग लेना आरम्भ कर दिया, तो कुछ ही वर्षों में इतना काम कर दिखाया कि पैलेस्टाइन के निवासी ही नहीं इंगलैण्ड और अमरीका के हजारों प्रसिद्ध पुरुष भी उसके प्रशंसक बन गये, और अन्त में वह दिन आया कि "इसराइल" राष्ट्र की बागडोर उसी के हाथ में सौंपी गई। आज उसके बच्चे ऐसी माता के कारण अपने को कितना सौभाग्यशाली समझ रहे होंगे? गोल्डा का उदाहरण भारतीय नारियों के लिये अवश्य ही प्रेरणादायक है। हमारे देशवासी योरोपियन और अमरीकन महिलाओं को केवल फैशनपरस्त और आरामपसन्द समझते रहते हैं, पर वहाँ लाखों की संख्या में ऐसी स्त्रियाँ मिल सकती हैं जिन्होंने देश और समाज की सेवा के निमित्त अनेक प्रकार के कष्ट सहन किये हैं। यह सभी जानते हैं कि अमरीका में बिजली और मशीनों से घर गृहस्थी के कार्य करने का इतना अधिक प्रचार है कि वहाँ की स्त्रियों को हाथ से बहुत थोड़ा काम करना पड़ता है। पर गोल्डा कर्तव्य की पुकार सुनकर उन सब सुविधाओं को छोड़कर स्वेच्छा से पैलेस्टाइन गई, जहाँ एक उजाड़ प्रदेश को निवास योग्य बनाने के लिये कड़ा परिश्रम करना अनिवार्य था। इसका सुफल उसके समाज को और उसे भी प्राप्त हुआ। हमारे देश में अभी तक इस प्रकार समाज-हित का ध्यान रखने वाली स्त्रियाँ इनी गिनी निकली हैं। नहीं तो अधिकांश स्त्रियाँ ऐसी ही हैं कि यदि पुरुष देश, समाज, धर्म की सेवा करने की अभिलाषा रखता हो तो उसके मार्ग में भी अड़ंगा लगाती है। जब कि देश की आधी आबादी इस प्रकार समाज कल्याण से उदासीन है, तो प्रगति और उन्नति की आशा कैसेक जा सकती है?

श्रमजीवी संगठन—

महिलाओं का 'लेबर यूनियन' का कार्य आरम्भ करने के कुछ ही समय बाद गोल्डा का कार्य क्षेत्र बढ़ता गया और प्रधान श्रमजीवी संगठन में भी भाग लेने लगी उसे श्रमजीवियों का प्रतिनिधि बना कर लन्दन भेजा गया। उसके पश्चात् उसे अमरीका में दो वर्ष रहकर वहाँ श्रमजीवी सहायक समिति में काम करने को कहा गया। इस तरह सात-आठ वर्ष में वह देश की एक प्रमुख नेता बन गई। वह अपनी बात को साफ शब्दों में कहती थी और किसी के प्रसन्न

या अप्रसन्न होने की चिन्ता नहीं करती थी। इसलिये बहुत से नाजुक मामले उसी को सौंपे जाते थे। एक बार श्रमजीवियों में बेकारी फैल जाने से श्रमजीवी नेताओं का उत्तरदायित्व बढ़ गया, और उन्होंने काम पर लगे हुये कर्मचारियों से अधिक चन्दा लेने का विचार किया। पर वे लोग पहले से ही कितने ही कार्यों के लिये इतना चन्दा दे रहे थे कि अधिक चन्दा के लिये कहने की किसी की हिम्मत नहीं पड़ी। तब गोल्डा को यह कार्य सौंपा गया और उसने एक-एक कारखाने में जाकर मजदूरों से कहा कि इस समय संघ के सामने ऐसी स्थिति आ गई है कि वह इस कार्य के लिये कहीं से रुपया नहीं पा सकता। यहूदियों की सर्वोच्च व्यवस्थापिका सभा तो इस कार्य का महत्व समझती नहीं। अमरीकन सहायकों से छोटे छोटे मामलों के लिये अपील करना एक गलती होगी। उनसे हम बहुत बड़ी-बड़ी समस्याओं के लिये सहायता प्राप्त करते हैं। ऐसी हालत में पैलेस्टाइन के श्रमजीवियों का ही यह कर्तव्य है कि वह अपने भाइयों को भूखों मरने से बचावें। गोल्डा की बात अनेक कर्मचारियों को अनुचित तो जान पड़ी क्योंकि वे पहले ही बहुत दबाये जा चुके थे, पर उसकी स्पष्टोक्ति से उन्हें विवश होकर उसकी सलाह स्वीकार करनी पड़ी।

अँग्रेज अधिकारियों से मुलाकात

सन् १९३६ में अरब लोगों ने फिर से उपद्रव करना और यहूदियों को मारना आरंभ किया। सन् १९३९ में इंगलैण्ड की सरकार ने पैलेस्टाइन की स्थिति के बारे में एक "व्हाइट-पेपर" प्रकाशित किया। उससे जान पड़ा कि ब्रिटिश सरकार पैलेस्टाइन का शासन यहूदियों को देने के बजाय वहाँ पर वह उनको "माइनोरिटी" (अल्प संख्यक) में ही रखना चाहती हैं। इससे समस्त यहूदी जगत में बड़ी हलचल मची और संसार भर के यहूदी प्रतिनिधियों की एक कान्फरेंस जेनेवा का (स्विटजरलैण्ड) में की गई। उसमें प्रसिद्ध यहूदी राजनीतिज्ञ वेजमैन ने यह सुझाव रखा कि "ब्रिटिश सरकार ने हमको दिया वचन भंगकर दिया है, पर तब भी हमको अपना रचनात्मक कार्यक्रम जारी रखना चाहिये। हमको रंज अवश्य है पर इसमें शर्म की कोई बात नहीं। हम आत्म-रक्षा के सिवाय अन्य प्रकार से हथियारों के प्रयोग का विरोध करते

हैं। हम अब भी इंगलैण्ड के "व्हाइट पेपर" में दिये गये अधिकारों से जितना बन पड़ेगा लाभ उठाने की चेष्टा करेंगे।"

पर कान्फरेंस की दूसरी तरफ से इसके विपरीत आवाज सुनाई दी कि "अब यहूदियों को पैलेस्टाइन में इस तरह कार्य करना चाहिये मानो वे ही शासक हैं। उनको तब तक इस तरह काम करना चाहिये जब तक वहाँ नियमानुकूल "इसराईल राष्ट्र" स्थापित न हो जाय।"

यह आवाज, पैलेस्टाइन के गर्म दल के नेता 'बेन गुरियन" की थी और गोल्डा की भी यही सम्मति थी। वह पूर्णरूप से बेन गुरियन को अपना मार्ग-दर्शक मानती थी और उसी के दिखाये मार्ग पर चलती थी। अँगरेज लोग योरोप के यहूदियों को अधिक संख्या में पैलेस्टाइन में बसाने को तैयार न थे, उधर हिटलर भी जर्मनी के यहूदियों पर अत्याचार ढा रहा था। दो-तीन दिन बाद ही योरोप में महायुद्ध की घोषणा हो गई और योरोप तथा अमरीका के नेता आगामी कठिनाइयों को समझ कर कुछ घण्टों के भीतर ही अपने देशों को भाग गये। पर गोल्डा तथा उसके साथी पैलेस्टाइन वाले वहाँ ठहरे रहे और उन्होंने विभिन्न देशों के युवक कार्यकर्त्ताओं को संगठित करके एक ऐसा संगठन बनाया जो युद्ध काल में भी विभिन्न रास्तों से उन यहूदियों को पैलेस्टाइन पहुँचाता रहे, जो हिटलर के आतंक से अपने को बचाने के लिये इधर-उधर भाग रहे थे। उस समय योरोप में बसने वाले यहूदियों की संख्या ७०–८० लाख के लगभग थी। इनमें से लाखों को ही हिटलर ने युद्ध आरम्भ होते ही गिरफ्तार करके असीम यंत्रणायें देकर मरवा दिया, लाखों ही युद्ध के चार-पाँच वर्ष के भीतर अन्य देशों में जर्मन सैनिकों और उनके सहकारियों द्वारा नष्ट कर दिये गये। फिर भी लाखों व्यक्तियों की रक्षा पैलेस्टाइन के जातीय नेताओं के प्रयत्नों से हो सकी।

इन दिनों गोल्डा को निरन्तर अत्यधिक परिश्रम करना पड़ता था। वह निरन्तर गुप्त और प्रकट भीटिङ्गों में भाग लेकर पैलेस्टाइन को अधिक संगठित और शक्तिशाली बनाने के लिये उद्योग करती रहती थी। विरोधी अरब लोगों के आक्रमणों से बचने के लिये भी सुरक्षा की व्यवस्था करनी

पड़ती थी। इसके लिये युवकों का एक गुप्त संगठन बनाया गया था जो छिपे तौर पर हथियार इकट्ठे करके अवसर पड़ने पर आक्रमण-कारियों का सामना करने को तैयार रहता था। सन् १९४३ सिरकिन और रिचलिन नामके दो यहूदी सैनिक-स्वयंसेवक अंगरेजी सेना के हथियारों की चोरी के अभियोग में पकड़े गये। इस मुकदमे में गोल्डा को भी गवाह के रूप में बुलाया गया। उस अवसर पर उसने अंगरेज अधिकारियों से जिस निर्भयता से बातचीत की उससे उसका प्रभाव अपने सजातियों में और भी अधिक जम गया।

जब फौजी अदालत के अध्यक्ष ने उससे कहा कि "आप तो एक शांतिप्रिय, कानून को मानने वाली महिला हैं?" तो उसने कहा कि मैं अभी तक किसी अपराध के लिये दोषी नहीं बनाई गई हूँ।" तब अध्यक्ष ने उसके भाषण का एक अंश पढ़कर सुनाया जिसमें कहा गया था हम श्रमजीवी पैलेस्टाइन में कि। कार के "फासिज्म" (अत्याचारी सैनिक शासन) के फैलने का मुकाबला करेंगे। इस देश के यहूदियों का संगठन पूर्णरूप से "व्हाइट पेपर" का विरोधी है और जो लोग उसका समर्थन करेंगे हम बराबर उनका मुकाबला करते रहेंगे। पिछले बीस वर्षों से हम अंगरेज सरकार पर विश्वास करते आये कि वह हमारे साथ न्याय करेगी, पर उसने अन्त में धोखा दिया। हम अपने युवकों को आक्रमण के लिये नहीं वरन् आत्मरक्षा के लिये हथियार चलाना सिखाते हैं। अगर कोई उनको दोषी ठहराता है तो पैलेस्टाइन के सभी यहूदी दोषी हैं। इंगलैंड की सरकार यदि यह सोचती है कि वे हमारे साथ कैसा भी व्यवहार करें, हम उ सहन करते रहेंगे, तो यह उसकी भूल है। पैलेस्टाइन में इतने जेलखाने और कैदियों को रखने के "कंसैन्ट्रेशन कैम्प" नहीं हैं जिसमें आत्मरक्षा के लिये प्रस्तुत समस्त यहूदियों को बन्द किया जा सके।"

गोल्डा ने अपने भाषण में कही इन बातों को अदालत के समक्ष भी स्वीकार किया और कहा कि निस्सन्देह हम आत्मरक्षा के लिये हथियारों का प्रयोग करेंगे और जो यहूदी योरोप से प्राण बचाने के लिये भाग रहे हैं

और अंगरेजी सरकार के रोकने पर भी गैर कानूनी ढंग से यहाँ आने की चेष्टा कर रहे हैं उनका भी हम यथाशक्ति सहायता करेंगे।"

एक दूसरे के अवसर पर पैलेस्टाइन की समस्या की जाँच करने वाली "एंग्लो-अमरीकन कमेटी के सदस्यों के सामने भी उसने स्पष्ट रूप से कहा कि 'हम पैलेस्टाइन में 'माइनोरिटी' (अल्प-संख्या) में रहने को तैयार नहीं हैं। मैं जानती हूं कि इस संसार के विभिन्न देशों में यहूदियों पर जो अन्याय अत्याचार हो रहे हैं उसका कारण उनका कोई व्यक्तिगत दोष नहीं है। वरन् उनका दोष यही है कि वे सब जगह "अल्प संख्यक" हैं। इसलिये संसार में एक स्थान तो ऐसा होना चाहिये जहाँ वे 'अल्प संख्यक' न माने जायँ और इच्छानुसार आ सकें।"

जब गोल्डा से प्रश्न किया गया कि "वह हिब्रू भाषा की शिक्षा पर जोर क्यों देती है ? किसी ऐसी भाषा को सिखाने का प्रस्ताव क्यों नहीं करती जिसे अन्य लोग भी समझ सकें ?" तो उसने कहा, "हिब्रू हमारी मातृभाषा है। क्या हम यह नहीं कह सकते कि जब इंटरनेशनल कान्फरेंसों में अन्य लोग विभिन्न भाषाओं में बोलते हैं तो हमको उनकी बात समझने में कठिनाई होती है। जिस प्रकार अंगरेजी आपकी भाषा है, फ्रेंच फरासीसियों की भाषा है, चाइनीज वहाँ के निवासियों की भाषा है, उसी प्रकार हमारी भाषा भी 'हिब्रू' है। अन्य देश वालों से तो कोई यह नहीं पूछता कि वह उस भाषा को क्यों बोलता है ? तब हम पर ही अपनी भाषा बोलने के कारण क्यों एतराज उठाया जाय ? वैसे अन्य देश वालों से व्यवहार करने के लिये हम अपने हाई-स्कूलों में अरबी और अंगरेजी की शिक्षा भी देते हैं।"

इस प्रकार प्रत्येक महत्व के अवसर पर गोल्डा ने यहूदियों की जातीयता और उनकी भाषा तथा संस्कृति की रक्षा के लिये कार्य और विचारों के रूप में जो कुछ प्रयत्न किया, उससे उसकी लोक प्रियता निरन्तर बढ़ती चली गई। दूसरी ओर अंगरेज सरकार के अधिकारी भी उसकी स्पष्टवादिता तथा न्यायानुकूलता के कारण उसका सम्मान करते थे। यद्यपि पैलेस्टाइन में होने वाले सभी गुप्त और प्रकट कार्यों में उसका सहयोग रहता था, किन्तु



ही कार्यों का तो वह संचालनकरती ही थी, पर अपनी योग्यताऔर वार्तालाप के ढंग से उसने न तो किसी बात का भेद खुलने दिया, और न आन्दोलन की किसी प्रकार अप्रतिष्ठा होने दी।

गुप्त रेडियो और उपवास आदि—एक दिन गोल्डा ने अपनी एक अमरीकन सहयोगिनी को सूचना दी कि चूँकि अँग्रेज सरकार की "सेंसरशिप" के कारण हमारे कार्यों और आन्दोलन के समाचार पैलेस्टाइन की जनता को नहीं मिल पाते, इस लिये हमने अपना एक गुप्त रेडियो-स्टेशन खोलने का निश्चय किया है, जिसका नाम 'कोल इसराईल' (इसराईल की आवाज) होगा। उसमें तुम्हें अँगरेजी में ब्राडकास्ट करना होगा। हिब्रू और अरबी में दूसरा व्यक्ति बोलेगा। जैसे ही ब्राडकास्ट समाप्त होगा रेडियो की मशीन को अलग-अलग करके कहीं छुपा दिया जायगा और बोलने वाले भी तुरन्त ही वहाँ से बाहर चले जायेंगे। यह ब्राडकास्ट का कार्य प्रतिदिन किसी नये स्थान से किया जायगा जिससे अँगरेज अधिकारी उसका पता लगा कर रोक न सकें। उनके पास राडर और अन्य हर तरह के वैज्ञानिक यंत्र हैं जिनके द्वारा वे इसके स्थान को ढूँढ़ सकते हैं। वैसे ब्राडकास्ट होते समय वह स्थान हमारे सैनिक जासूसों द्वारा घिरा रहेगा, जो कोई घटना होने पर तुरन्त सीटी बजाकर खबर दे देंगे। वे दो चार मिनिट में ही मशीन को छिपा कर छतों पर जाकर इधर-उधर कूद जायेंगे उनको इस काय के लिये प्रशिक्षित किया गया है।

यह रेडियो का कार्य काफी समय तक चलता रहा, पर अँगरेजी गुप्तचर इसका पता कभी न लगा सके। गोल्डाने भी ब्राडकास्ट करने वाली महिला से एक बार के सिवाय फिर कभी इस सम्बन्ध में एक भी शब्द नहीं कहा। क्योंकि यह निश्चय कर लिया गया था कि ऐसे गुप्तकार्यों के सम्बन्ध में कभी चर्चा ही न की जाय और न उसमें भाग लेने वाले व्यक्तियों के सम्बन्ध में कुछ पूछताछ की जाय। इसी उपाय से पैलेस्टाइन में 'यहूदी-राज्य' के संस्थापक अपनी योजनाओं को गुप्त रूप से पूरा करते हुये अन्त में लक्ष्य तक पहुँच गये।

उन्हीं दिनों योरोप से भागने वाले कई शरणार्थियों का एक जहाज अँगरेजी सरकारके कहने पर इटली के बन्दरगाह पर रोक लिया गया। इस पर

शरणार्थी भूख हड़ताल करने लगे। जब यह समाचार पैलेस्टाइन पहुंचा तो वहाँ भी बड़ी हलचल मची और गोल्डा ने प्रस्ताव किया कि हम लोगों को भी अपने विपदग्रस्त भाइयों के साथ उपवास करना चाहिये। इस उपवास में केवल प्रमुख संघों के चुने हुये प्रतिनिधि ही भाग ले सकते थे। इसका आशय यही नहीं था कि प्रसिद्ध नेताओं के उपवास करने से इङ्गलैण्ड की जनता पर विशेष प्रभाव पड़ेगा, वरन् यह बात भी दृष्टिगोचर रखी गई थी कि इस महत्त्वपूर्ण कार्य में उन्हीं को स्थान दिया जाय जो पर्याप्त जातीय-सेवा करके उसके लिये अपनी योग्यता सिद्ध कर चुके हों। एक शर्त यह भी रखी गई थी कि उपवास करने वालों का स्वास्थ्य ऐसा हो कि वे शीघ्र ही असमर्थ न हो जायें। इसलिये उनमें से प्रत्येक को डाक्टर का सर्टीफिकेट पेश करना भी आवश्यक था।

जिस समय की यह घटना है उसी समय गोल्डा बीमारी से उठकर अस्पताल से अपने घर आई थी। अभी उसमें काफी कमजोरी थी, इसलिये उसके डाक्टर ने सर्टीफिकेट देने से इनकार कर दिया। इस पर गोल्डा ने हठ-पूर्वक कहा कि सर्टीफिकेट नहीं मिलेगा तो मैं घर पर ही निजी तौर पर उपवास करूँगी, क्योंकि भूख हड़ताल का प्रस्ताव मैंने ही किया है। डाक्टर उसकी हठीली प्रकृति को जानता था, इसलिये उसने विचार किया कि घर पर उपवास करने की अपेक्षा सुयोग्य डाक्टरों के निरीक्षण में सबके साथ उपवास करना ही ठीक रहेगा। तब उसने गोल्डा को सर्टीफिकेट दे दिया।

उपवास "ज्यूइश एजेन्सी" के जरूसलम स्थित भवन में आरंभ किया गया, जिससे अंगरेज अधिकारियों पर उसका पूरा प्रभाव पड़ सके। दो दिन तक तो उपवास करने वाले एक जगह इकट्ठे होकर विचार विमर्श करते रहे, पर तीसरे दिन जब वे कमजोर पड़ने लगे तो अधिकांश रात्रि में अपने कमरों में ही पड़े रहने लगे। चौथे दिन प्रसिद्ध अमरीकन लेखक हेरल्ड लास्की का तार रोम से आया कि हम शरणार्थियों के जहाज को छुड़ाने की व्यवस्था कर रहे हैं उपवास बन्द कर दिया जाय। पर उपवास करने वालों ने उत्तर दिया कि जब तक इस सम्बन्ध में सरकार कोई वचन न दे उपवास का तोड़ना संभव नहीं। उसी दिन अमरीका के भी कितने ही लखपती यहूदियों ने इस सम्बन्ध

में सहानुभूति प्रकट करने के लिये उपवास करने की घोषणा की। पर तब तक सरकार ने जहाज को छोड़ दिया, और मामला समाप्त हो गया।

सशस्त्र संघर्ष का आरम्भ—

"ऐंग्लो-अमरीकन" कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की थी कि इस वर्ष एक लाख यहूदियों को पैलेस्टाइन में जाने दिया जाय। पहले तो इंगलैण्ड की सरकार ने इसे मान लिया पर महीने भर बाद वह कहने लगी कि यदि इतने यहूदी भेजे गये तो अरब लोगों का उपद्रव खड़ा हो जायगा जिसे रोकने के लिये हमें एक "डिवीजन" सेना वहाँ भेजनी पड़ेगी। इंगलैण्ड के इस पक्षपातपूर्ण रुख को देखकर पैलेस्टाइन के आन्दोलनकारी बिगड़ खड़े हुए और उन्होंने निश्चय किया कि अब हम वह कार्य कर दिखायेंगे, जिससे इंगलैण्ड को एक डिवीजन से भी अधिक सेना इस देश में भेजनी पड़ेगी। बस उन्होंने १६ जून १९४६ को आधीरात के समय तमाम पुलों को उड़ा दिया, अन्य देशों को जाने वाले रास्तों को काट दिया और इस प्रकार पैलेस्टाइन को अंगरेजी हकूमत को कुछ घंटों में ही अपंग कर दिया।

अँगरेज सरकार ने भी इसके उत्तर में जोरों से दमन आरम्भ किया और समस्त नेताओं तथा कार्यकर्ताओं को पकड़कर काँटेदार तारों से घिरे कैम्प में बन्द कर दिया। जब गिरफ्तारियाँ होने लगीं तो कुछ लोगों ने दौड़कर गोल्डा को खबर दी। ताकि कहीं छुप कर वह गिरफ्तारी से बच सके। पर उसने ऐसा करने से इनकार कर दिया। वह देश के लिये कष्ट सहन करने में किसी से पीछे रहना नहीं चाहती थी। पर अँगरेज अधिकारियों ने कुछ सोचकर उसको नहीं पकड़ा। वह इससे जरा भी खुश नहीं हुई, क्योंकि अब सब नेताओं के पकड़े जाने पर उसी को "ज्यूइश एजेंसी" का अध्यक्ष बनाया गया और तब अँगरेज अधिकारियों से सब प्रकार की बातचीत और समझौता करने का भार उसी पर आ पड़ा। पहले तो लोगों को सन्देह था कि वह पुराने अध्यक्ष और नेताओं की तरह विद्वान और राजनीतिक मामलों में अनुभवी नहीं है। अभी तक लोग उसे एक प्रभावशाली भाषणकर्ता के रूप में ही जानते

थे, इसलिये वे सोचते थे कि शासन सम्बन्धी पेचीदा समस्याओं और विभिन्न विभागों की व्यवस्था वह ठीक तरह नहीं कर सकेगी। पर गोल्डा ने इस पद पर रह कर भी बड़ा काम कर दिखाया। वह यहूदी राज्य के लिये बराबर अँगरेज अधिकारियों से संघर्ष करती रहती थी, पर उसका व्यवहार ऐसा सदाशयता पूर्ण रहता था कि वे कभी रुष्ट नहीं होते थे। पैलेस्टाइन के हाई कमिश्नर मि० कनिङ्गहम उससे बहुत सन्तुष्ट थे और उसके सद्भावपूर्ण व्यवहार का परिणाम यह हुआ कि कितने ही अधिकारी यहूदियों की माँग के अनुकूल हो गये और सन् १९४९ में इसराईल को स्वराज्य का अधिकार दे दिया गया।

पर सबसे अधिक कठिन समस्या "इसराईल" राष्ट्र के स्थापित होते ही आई। अरब लोगों ने घोर उपद्रव मचा दिया और आसपास के अरब शासक भी उस पर आक्रमण करने की तैयारी करने लगे। इसका मुकाबला करने के लिये सैन्य सामग्री खरीदना आवश्यक था और यह काम एक-दो करोड़ का नहीं, वरन् पचासों करोड़ का था। तब गोल्डा कर्ज और चन्दा के रूप में धन इकट्ठा करने अमरीका गई। यद्यपि स्वयं इसराईल के खजानची ने कहा था कि अमरीका से पचास-साठ लाख डालर से अधिक ऋण न मिल सकेगा पर गोल्डा ने ढाई महीने में ५ करोड़ डालर इकट्ठा करके दिखा दिया। उसी समय योरोप में मौजूद दूतों ने टैंक, वायुयान और गोलाबारूद खरीद कर पैलेस्टाइन को रवाना कर दिया और वहाँ की सेना जोरों के साथ अरबों का मुकाबला करने योग्य बन गई। उस अवसर पर इसराईल राष्ट्र के सर्व प्रथम प्रधानमंत्री बेनगुरियों ने कहा—"किसी दिन जब इसराईल राष्ट्र का इतिहास लिखा जायगा, तो लोग जान सकेंगे कि एक ऐसी यहूदी स्त्री थी जिसने धन इकट्ठा करके दिया और उसी से राष्ट्र का स्थिर रह सकना संभव हुआ।"

अरब लोगों से मारकाट आरंभ हो जाने पर गोल्डा अरब स्त्री का वेष धारण करके जार्डन के बादशाह अबदुल्ला के पास गई। अरबों के देश में इस प्रकार चालाकी से घुस जाना बड़ा खतरे का काम था, जिसमें कदम-कदम पर किसी की गोली का शिकार हो जाने का भय था, पर देश की खातिर वह

अपने प्राणों की बाजी लगाने को तैयार हो गई। यद्यपि शाह अबदुल्ला ने उसके प्रस्ताव को पूरी तरह से स्वीकार तो नहीं किया, फिर भी आक्रमण में कुछ ढील आगई और इसराईली अपनी तैयारियाँ कर सके।

शाह अबदुल्ला से बातचीत करते समय गोल्डा ने जिस कौशल का परिचय दिया उससे उसकी राजनीतिज्ञता तथा निर्भीकता पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। सबसे पहले उसने अबदुल्ला को उसके वायदे की याद दिलाई कि वह "इसराईल राष्ट्र" की स्थापना के लिये पहले जो वचन दे चुका है उसे अब पूरा करना चाहिये। अबदुल्ला ने उस वायदे से इनकार तो नहीं किया पर कहा कि "उस समय मैं समझता था कि अपना मालिक मैं स्वयं ही हूँ, पर अब परिस्थिति बदल गई है और मैं कोई कार्य अपनी मर्जी से करने को स्वतन्त्र नहीं हूँ। फिर भी अगर यहूदी स्वतन्त्र राष्ट्र स्थापित करने की घोषणा न करें और पैलेस्टाइन में बाहर के यहूदियों का आना बहुत समय के लिये रोक दें तो युद्ध का होना रोका जा सकता है। एक वर्ष के बाद मैं पैलेस्टाइन को जार्डन के साथ मिला लूँगा और यहूदियों को पार्लियामेण्ट में यथोचित प्रतिनिधित्व प्रदान करूँगा। मेरा व्यवहार यहूदियों के प्रति सदाशयता तथा उदारता का रहेगा। अगर यहूदी युद्ध आरम्भ कर दें और उसके फल स्वरूप उनके द्वारा अब तक की गई कृषि तथा उद्योग धन्धों की उन्नति नष्ट हो जाय तो यह बड़े खेद की बात होगी। मैं नहीं समझता कि आप लोग स्वतन्त्र राष्ट्र की घोषणा के लिये ऐसी जल्दबाजी क्यों कर रहे हैं।"

गोल्डा ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया—"जो जाति दो हजार वर्ष से अपने अधिकारों के लिये राह देखती रही है उसे जल्दबाज कैसे कहा जा सकता है!" मैं तो समझती हूँ कि यहूदी जरूरत से ज्यादा धैर्य धारण किये रहे, इसी से उन पर अन्याय किया जाता रहा।" गोल्डा ने यह भी कहा कि अबदुल्ला अरब लोगों को दी जाने वाली भूमि को अपने राज्य में शामिल करना चाहे तो उस सम्बन्ध में हम समझौते के लिये तैयार हैं। वैसे इस समय यहूदी कुछ महीने पहले की अपेक्षा बहुत शक्तिशाली हो गये हैं। अगर उनको युद्ध में घसीटा ही गया तो वे किसी भी स्थान पर उसके लिये तैयार हो जायगे।

अबदुल्ला ने कहा कि—मैं यहूदियों की शक्ति को समझता हूँ कि वे आक्रमणकारी को हटा सकते हैं। मैं अपने पुराने वायदे को भी स्वीकार करता हूँ, पर तब से बहुत-सी नई बातें हो चुकी हैं। तब मैं अकेला कर्ता-धर्ता था पर अब मैं पाँच शासकों के गुट में से एक हूँ।

गोल्डा ने मौका देख कर कहा कि "आप यह समझ लें कि केवल यहूदी ही आपसे मित्रता रखते हैं।" इस पर अबदुल्ला ने सर हिला कर कहा कि "इस सम्बन्ध में मुझे किसी प्रकार का सन्देह नहीं है और मैं आपकी मैत्री-भावना में विश्वास रखता हूँ। मैं हृदय से यह विश्वास करता हूँ कि भगवान ही यहूदी लोगों को फिर से पैलेस्टाइन में वापस लाया है आप लोग "सेमेटिक नस्ल" के विशेष व्यक्ति हैं और आपके ज्ञान तथा उत्साह के द्वारा ही इस प्रदेश की वास्तविक उन्नति हो सकती है। हम सब आपस में सहयोग का भाव रख कर ही प्रगति-पथ पर बढ़ सकते हैं। मैं इन सब बातों को अच्छी तरह जानता और समझता हूँ, पर परिस्थितियाँ बहुत कठिन हैं। इस समय बिना सोचे समझे कोई कदम उठाना खतरनाक है और इसीलिये मैं आपसे धैर्य रखने को कहता हूँ।"

गोल्डा अबदुल्ला की नीतिज्ञता को अच्छी तरह समझती थी। इसलिये उसकी चिकनी-चुपड़ी बातों में न आकर उसने स्पष्ट शब्दों में कहा—"हम आपको इस विषय में भ्रम में रखना नहीं चाहते और मैं इस बात को बिल्कुल स्पष्ट कर देना चाहती हूँ कि हम आपके इस प्रस्ताव पर किसी हालत में कभी विचार भी नहीं कर सकते। हमारे सामने बहुत सी कठिनाइयाँ हैं, तो भी विजय हमारी ही होगी। सम्भवतः युद्ध के पश्चात् हम फिर मिलेंगे, जब कि "इसराईल" राष्ट्र की स्थापना हो चुकेगी।"

इस प्रकार गोल्डा ने एक चतुर राजनीतिज्ञ की तरह अपने विरोधी अरब शासकों में से एक प्रमुख व्यक्ति को प्रत्यक्ष नहीं तो अप्रत्यक्ष रूप से अपने अनुकूल बना लिया। इसके परिणाम स्वरूप युद्ध कुछ समय रुका रहा और इस बीच में यहूदियों ने अपनी शक्ति अधिक से अधिक बढ़ा ली। युद्ध में गोल्डा ने भी अपना कर्तव्य पूर्ण शक्ति और योग्यता से निबाहा और अन्त में उसके कथनानुसार यहूदियों की ही विजय हुई।

इसराईल की स्थापना के बाद ही गोल्डा को राजदूत बना कर रूस भेजा गया। वहाँ के यहूदियों ने उनका ऐसे उत्साह से स्वागत किया कि यहूदियों के 'सिनागोग" (धर्म मंदिर) में उसे देखने के लिये ४० हज़ार व्यक्तियों की भीड़ लग गई। इसके पश्चात् जब राष्ट्र संघ में अरब प्रतिनिधियों की बातों का उत्तर देने को उसे इसराईल का प्रतिनिधि बना कर भेजा गया तो वहाँ भी उसने अपना प्रभाव अच्छी तरह जमा लिया। उसी वर्ष उसे इसराईल के 'श्रम मंत्री' के पद पर नियुक्त किया गया। इस पद पर सात-आठ वर्ष तक कार्य करके उसने मजदूरों के लिये सस्ते और सुविधाजनक मकान बनाये जाने की व्यवस्था की। सन् १९६६ में वह विदेश मंत्री बना दी गई। इन आठ वर्षों में उसने प्रयत्न करके चालीस देशों से इसराईल-राष्ट्र का राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित किया। सन् १९६५ में आपने विश्राम लेने के विचार से नये चुनावों में भाग नहीं लिया और दो वर्ष तक अपनी पुत्री के पास एक कृषिफार्म में निवास करती रहीं। जब इसराईल के प्रधान मंत्री एशकोल का देहान्त हुआ तो मित्रों के बहुत अधिक आग्रह करने पर आप श्रमजीवी दल की तरफ से चुनाव के लिये खड़ी हुईं और १७ मार्च १९६९ को देश की सर्वोच्च शासक चुन ली गईं।

इस प्रकार एक महिला के चुनाव में सफल होने से इसराईल में एक नये युग के आगमन की संभावना है। अभी तक उसकी बहुत कुछ शक्ति और आर्थिक साधन विरोधी अरब राष्ट्रों से युद्ध की तैयारी करने में खर्च हो जाते हैं। गोल्डा मेयर ने इसी अगस्त (१९७०) में स्वेज नहर आदि जीते हुये स्थानों से सेना हटाकर ऐसा कदम उठाया है, जिससे शान्ति की आशा हो गई है। यद्यपि संसार की राजनीतिक गतिविधियों को देखते हुये हम दीर्घकालीन स्थायी शांति की आशा तो अभी नहीं कर सकते, पर श्रीमती गोल्डा मेयर के इसराईल की संचालिका होने से यह विश्वास किया जा सकता है, वे जहाँ तक संभव होगा अपनी तरफ से युद्धाग्नि को भड़काने का कोई कार्य नहीं करेंगी और समझौते और शाँति के लिये प्रयत्नशील रहेंगी।

वर्तमान समय में गोल्डा मेयर का एक ऐसे राष्ट्र का प्रधान संचालक

नियुक्त किया जाना, जो आकार और जनसंख्या की दृष्टि से छोटा होने पर भी विश्व की राजनीति को प्रभावित कर रहा है, एक बड़ी महत्त्वपूर्ण घटना है। वर्तमान समय में युद्ध से उकताया और भयभीत हुआ संसार चिरस्थायी शांति के लिये अनेक प्रस्तावों पर विचार विमर्श कर रहा है। उनमें से एक प्रस्ताव यह भी है कि अब शासन की बागडोर स्त्रियों के हाथ में दे दी जानी चाहिये। पुरुष शासनकर्ता बनकर बड़े-बड़े अन्याय और जुल्म कर चुका, कत्ले आम की आज्ञा देकर लाखों निरपराध और निरीह व्यक्तियों के खून से भूमि को लथपथ कर चुका, धर्म के नाम पर असंख्यों व्यक्तियों को प्रज्ज्वलित अग्नि में झोंक चुका। अब उसका युद्धोन्माद यहाँ तक बढ़ चुका है कि वह एटम और हाईड्रोजन बमों द्वारा समस्त संसार में एक साथ महाप्रलय का दृश्य उपस्थित करने की धमकी दे रहा है। इस स्थिति को देखकर अनेक विचारकों का ध्यान इस तरफ आकर्षित हुआ है कि यदि शासन की शक्ति स्त्रियों के हाथ में दे दी जाय तो वे राजनीति की गतिविधियों को नया मोड़ देने में समर्थ हो सकती है। सभी स्त्रियों में मातृहृदय होता है और वह जहाँ तक संभव होगा खून खराबी का अवसर कम से कम आने देंगी।

गोल्डा मेयर ने भी शासन की बागडोर संभालते ही उपर्युक्त मार्ग का अनुसरण आरम्भ कर दिया है। यद्यपि वह अपने राष्ट्र के सम्मान और सुरक्षा में किसी प्रकार की कमी नहीं आने देना चाहती तो भी उसने अपने आरंभ के ही भाषण में यह घोषणा कर दी है कि—I dont know when peace will come, but I have no doubt that it will come." (मैं नहीं जानती कि शान्ति कब तक हो सकेगी। पर इसमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं कि वह अवश्य आयेगी।)

पर इसराईल और अरब-राष्ट्रों में इस समय जैसी तनातनी हो रही है, और अरबों का एक दल इस छोटे से यहूदी राष्ट्र को जैसी धमकियां दे रहा है, उससे यही जान पड़ता है कि गोल्डा पसन्द करे या न करे, एक बार इन दोनों पक्षों में निर्णयात्मक संघर्ष होकर रहेगा। कुछ उग्र अरब राष्ट्रवादियों ने "अल फतह" नाम का एक संगठनबनाया है जिसका उद्देश्य प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सब

प्रकार के हिंसक और आतंकवादी उपायों से काम लेकर इसराईल का जड़मूल से सफाया कर देना है। उसके मुखिया यासर अराफात ने कुछ समय पूर्व एक पत्र सम्वाददाता से बातें करते हुये कहा था—

"इस समय हमारा उद्देश्य इसराईल के साथ एक खूनी और लम्बी लड़ाई करके उसकी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति को नष्ट-भ्रष्ट कर देना है। उस युद्ध में हमको सफलता प्राप्त करनी ही होगी।"

अन्य अरब राष्ट्र, जिनका मुखिया मिश्र है इसराईल की सत्ता को मानने से इनकार करते रहते हैं और कहते हैं कि "हम पैलेस्टाइन की भूमि पर, जहाँ सैकड़ों वर्षों से अरब लोग निवास कर रहे हैं, विदेशियों का शासन कायम नहीं रहने देंगे।" उधर यहूदियों का कथन है कि 'पैलेस्टाइन ही हमारे पूर्वजों का एकमात्र निवास-गृह है। मुसलमानों ने कुछ सौ वर्ष पूर्व अपनी विशाल सैनिक शक्ति द्वारा उस पर कब्जा कर लिया। पर वास्तव में वह हमारा है और हमारा ही रहेगा।" इन दोनों प्रकार की मान्यताओं पर विचार करने और दोनों पक्षों की दृढ़ता को देखकर इस बात की सम्भावना बहुत कम जान पड़ती है कि यह समस्या अन्त में शांतिपूर्वक हल हो सकेगी। लक्षणों से तो यही प्रतीत होता है कि कुछ ही वर्षों में यह संघर्ष भयंकर रूप में प्रकट होकर केवल इन दोनों पक्षों में ही सीमित नहीं रहेगा वरन् विश्वव्यापी संग्राम का भी कारण बन जायगा। उस स्थिति में भी गोल्डा मेयर इसराईल राष्ट्र की सर्वोत्तम संरक्षिका सिद्ध होंगी, यह विश्वास किया जा सकता है।

मुद्रक—युग निर्माण प्रेस गायत्री तपोभूमि मथुरा,